Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.shisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2024 SHISRRJ | Volume 7 | Issue 2
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

भारतीय ज्ञान परंपरा में योग एवं नारी

डा. कैलाश चन्द मीणा
सहायक प्रोफ़ेसर, शिक्षापीठ, श्री ला.ब.शा. रा. संस्कृत विश्वविद्यालय,नई दिल्ली।

Article Info

Received : 03 March 2024
Published : 15 March 2024

Publication Issue :
March-April-2024
Volume 7, Issue 2

Page Number : 41-48

सारांश :- प्रस्तुत पत्र में भारतीय ज्ञान परंपरा में योग एवं नारी की अवधारणा स्वरूप एवं विभिन्न दृष्टिकोणों के बारे में व्यापक वर्णन क्या जा रहा है भारतीय ज्ञान परंपरा में योग को भारत की सबसे बड़ी देन विश्वभर में मानी जा रही है। जिस प्रकार शून्य के आधार पर आधुनिक विज्ञान स्थापित हुआ उसी तरह आधुनिक जीवन का आधार भी योग बनता जा रहा है। आज विश्व पटल पर बढ़ता हुआ योग भारतीय ज्ञान परंपरा की विजय है । गीता के " समत्वं योग उच्चते" वाले समत्व भाव से जीने की प्रेरणा हमें योग ही दे रहा है। तथा योग आध्यात्मिक साधना का संचेतना का केंद्र रहा है। योग को सभी परंपराओं में अपनाया है तथा इसका महत्व भारतीय ज्ञान परंपरा में सदा से रहा है। नारी जीवन का प्रथम सोपान कन्या है, वैदिक काल में पुत्र के समान मंगलकारी कन्या को समझा जाता था नवरात्रा में नवदुर्गा का प्रतीक मानकर पूजा की जाती थी , नारी पद नर से ही उत्पन्न होता है नर और नारी जीवन रथ के दो पहिए हैं किसी एक को प्रथम स्थान पर बताकर दूसरे को गौण कहा ही नहीं जा सकता दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, अर्धनारीश्वर ईश्वर के रूप में नर और नारी दोनों के समान अंश बताए गए हैं। विवाह के बाद ही कन्या नारी पद से जानी जाती है, नारी पद के पर्याय स्त्री, मेंना ,जाया, सुंदरी, दंपत्ति, पत्नी आदि वैदिक काल में नारियों की सामाजिक तथा सर्वविधिक दशाओं की दृष्टि से स्वर्णिम काल रहा है। विभिन्न संवाद सूक्तों जैसे शर्मा – पाणी , यमी– यमी , विश्वामित्र – नदी आदि से स्पष्ट पता चलता है कि वैदिक काल में स्त्रियों भी परम विदुषी होती थी । नारी अपनी इच्छा से वर का वरण करती थी । माता–पिता के अनुमति से गांधर्व विवाह की अनुमति पाती थी । पत्नी को गृह की सामग्री कहा जाता था । यास्क ने देवर पद का निर्वचन "द्वितीयो वर उच्यते" ऋग्वेद में विश्वला जैसी कुशल योद्धा नारी इस बात का उदाहरण है कि स्त्रियों को युद्ध में भाग लेने का अधिकार भी प्राप्त था । धार्मिक कार्य स्त्रियों के बिना कभी पूर्ण

Copyright © 2024 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)** which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium for non-commercial use provided the original author and source are credited.

नहीं होता था यज्ञादि अनुष्ठान में अग्नि प्रज्वलन भी जोड़े से ही करने का विधान था, सामाजिक समारोहों में भी पति पत्नी दोनों एक साथ सम्मिलित होते थे, पुरुष के समान उपनयन संस्कार करवाकर नारी भी वेदाध्ययन की अधिकरणी थी। "पुं नामक नरकात त्रायत इति पुत्रः" इस धारणा के कारण पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा अधिक थी तथापि नारी को सम्मानित स्थान प्राप्त था ।

बीज शब्द (Key Words) : भारतीय ज्ञान परम्परा, योग, दर्शन, अष्टांग, चित्त, कन्या, अर्धनारीश्वर, विवाह, नारी ।

भूमिका :- योग की परंपरा बहुत प्राचीन है और इसके आदि प्रवक्ता हिरण्यगर्भ ही माने गए हैं और कोई नहीं –" हिरण्य योगस्य वक्ता नान्यः पुरातनः" वृ. यो. या.12.5 उ. ऋग्वेद में भी अद्वितीय हिरण्यगर्भ के बारे में बताया गया है कि जो सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों का गर्भ उत्पत्ति स्थान उत्पादक है वह ही प्रथम था, वह समस्त जगत का सनातन प्रादुर्भूत स्वामी है– "हिरण्यगर्भः संवर्ततााग्रे भूतस्य जातः पतिरेकआसीत्" ऋग्वेद 10.121.1 योग सूत्र में भी कहा गया है कि यह हिरण्यगर्भ परमपिता परमात्मा ही है । यह गुरुओं का भी गुरु है " स षः पुर्वेषामपि गुरुः कलेनानवच्छेदात" योग सूत्र 1.26 हिरण्यगर्भ से पुरातन कोई नहीं है नान्यः पुरातनः – बृ. यो . या . स्मृ. 12.5 उ. । इसी को योगी जन महान तथा विरंची और अज (अजन्मा) भी कहते हैं– "हिरण्यगर्भो भगवान एष बुद्धिरिति स्मृतः महानिति च योगषु वीरचरिति चाप्यजः" योगेश्वर श्री कृष्ण अर्जुन को कहते हैं– हे अर्जुन मैंने किसी नई निष्ठा का उपदेश नहीं किया, किंतु तुझे अपना विश्वसनीय मित्र समझकर यह लुप्तप्राय सनातन योग का उत्तम रहस्य बताया है–

इमं विवश्वते योगं प्रोक्तवानहमत्ययम । विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाक्वे एवं परंपरा प्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः । स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तपः ।। स एवायं मया ते द्य योगः प्रोक्तः पुरातनः । भक्तो सि मे सखा चेति रहस्यं ह्योत्दुतत्रम ।।

गीता 4.1.3)

योग प्राचीन काल से भारतीय आध्यात्मिक चेतना का केंद्र रहा है अग्नि पुराण में भी मन और आत्मा तथा आत्मा और परमात्मा के संयोग को योग कहा गया है । सांख्य दर्शन के अनुसार प्रकृति और पुरुष का भेद होने पर भी पुरुष का आत्म स्वरूप में स्थित हो जाना ही योग है कठोपनिषद के अनुसार जब इंद्रियां मन के साथ और मन अविचल बुद्धि के साथ स्थिर हो जाता है तो यह अवस्था योग की होती है । गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने "योगः कर्मसु कौशलम्" कहकर योग का जो स्वरूप अर्जुन के समक्ष प्रस्तुत किया है वह सामान्य जन के सर्वाधिक निकट है । कोई भी मनुष्य एकाग्र चित्त होकर निष्काम भाव से कर्म करते हुए योग की सिद्ध करता है । भगवान श्री कृष्ण आगे कहते हैं–

तपस्विभ्योधिको योगी ज्ञानिभ्यो पिमतोधिकः । कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुनः ।। 6/46 गीता

अर्थात योगी तपस्वियों से श्रेष्ठ है, शास्त्र ज्ञानियों से भी श्रेष्ठ है, और सकाम कर्म करने वालों से भी योगी श्रेष्ठ है । इसलिए हे अर्जुन, तुम योगी ही बनो यहाँ कहने का तात्पर्य इतना भर है कि योग साधना एवं विद्या से अपने आप को इतना निष्णात बना लो कि भविष्य में आने वाली सभी समस्याओं का समाधान सहजता से निकाल सको । योग एक पूर्ण शास्त्र है, जो

किसी जाति विशेष की धरोहर न होकर, विश्वमानव की विरासत है । श्रीमदभगवत गीता में समत्व और कर्म में कुशलता को योग कहा गया है "योग वशिष्ठ" में योग शब्द का अर्थ संसार सागर से पार होने की मुक्ति योग है । महर्षि पतंजलि वृत्तियों के निरोध को योग कहते हैं ।

"योगश्चित्तवृत्ति निरोधः ।" – योगदर्शन 1.2

चित्त की पांच अवस्थाएं है– क्षित, विक्षिप्त, मूढ़, एकाग्र और निरुद्धावस्था । चित्त की एकाग्र अवस्था से योग का प्रारंभ होता है । चित्त में जितनी भी वृत्तियां अर्थात विचार उत्पन्न होते हैं उन सब को महर्षि पतंजलि ने पांच भागों में बांटा है– प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति । इन पांचों प्रकार की क्लिष्ट और अक्लिष्ट वृत्तियों को रोक देना ही योग है । "योग: समाधि" । कठोपनिषद की छठवीं वल्ली के 10 व 11 मंत्र में योग का वर्णन करते हुए ऋषि कहते हैं–

यदा पञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह ।

बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम् ।। -कठोपनिषद 6.10

अर्थात जब पांचों ज्ञानेंद्रियां मन के साथ स्थिर हो जाती है, ठहर जाती है और बुद्धि भी कोई चेष्टा नहीं करती अपितु निश्चल निर्मल हो जाती है उस अवस्था को परम गति कहते हैं और भी

तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरमिन्द्रिय धरणां ।

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ ।। - कठोपनिषद -6.11

अर्थात उपरोक्त पांचों ज्ञानेंद्रियों की इस धारणा को योग कहते हैं । जिसकी इंद्रियां स्थिर हो जाती है वह अप्रमत्त अर्थात प्रमादहीन सावधान हो जाता है । योग का अभिप्राय है प्रभव तथा अप्यय । शुभ संस्कारों की या विवेक की उत्पत्ति प्रभव कहलाता है तथा अशुभ संस्कार **अविद्या का नाश अप्यय कहलाता है ।**

"योगेन रक्षते धर्मो विद्या योगेन रक्ष्यते" ।

योग से धर्म और विद्या दोनो की रक्षा होती है । तन और मन की अस्वथता के कारण मनुष्य इच्छित मनोकामना पूर्ण नहीं कर पाते । भारतीय योग, ध्यान साधना की विविध उपचार पध्दतियां इसी प्रयोजन के लिए हैं ताकि मन की वृत्तियां परिमार्जित परिष्कृत हो जाएं और तन स्वस्थ रहकर इच्छित कार्य को पूर्णता तक पहुंचा सके । षडदर्शनों एवं पुराणों में योग का संक्षिप्त उल्लेख करते हुए ईश्वर ब्रह्म एवं जीव को स्वरूप का वर्णन किया गया है –

योगस्थः कुरु कर्माणि संग त्यक्त्वा धन्जय ।

सिद्धअसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ।।

अर्थात हे धनंजय तू आसक्ति को त्यागकर सिद्धि और असिद्धि में समान बुद्धि वाला होकर योग में स्थित हुआ कर्तव्यकर्मों को कर, समत्व तू ही योग कहलाता है । फिर कहा गया है–

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते ।

तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम ।।

अर्थात समबुद्धि युक्त पुरुष पुण्य और पाप दोनों को इसी लोक में त्याग देता है अर्थात उन से मुक्त हो जाता है इससे तू समत्वरूप योग में लग जा; यह समत्वरुप योग ही कर्मों में कुशलता है अर्थात कर्मबंधन से छूटने का उपाय है ।

योग का अभ्यास पूर्व वैदिक काल में भी किया जाता था । महर्षि पतंजलि ने उस समय के प्रचलित प्राचीन योग अभ्यासों को व्यवस्थित एवं वर्गीकृत किया और इससे संबंधित ज्ञान को पतंजलि योग सूत्र नामक ग्रंथ में क्रमबद्ध तरीके से व्यवस्थित किया । पतंजलि के बाद भी अनेक ऋषियों एवं योग आचार्यों ने योगाभ्यासों योगिक साहित्य के माध्यम से इस क्षेत्र के संरक्षण और विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है ।

भारतीय दर्शन में योग:- सभी दर्शन ग्रंथों में योग को योगाभ्यास के समान रूप से स्वीकार किया गया है जैसे–

वेदांत दर्शन में योग:- वेदांत ग्रंथ विवेक चूड़ामणि में परमात्मा प्राप्ति के उपाय के रूप में योग साधना का वर्णन किया गया है–

उद्धरेदामात्मानं मग्नं संसारवारिधौ ।

योगारूढ़त्वमासाद्यसम्यग्दर्शननिष्ठ्या ।।–विवेक चूड़ामणि–1

अर्थात संसार सागर में डूबी हुई आत्मा का आत्मादर्शन में मग्न रहता हुआ योगारूढ़ होकर स्वयं ही उद्धार करें ।

न्याय दर्शन में योग:- अभ्यास का वर्णन करते हुए कहां गया है कि– आत्मन्यात्ममनसो संयोग विशेषात आत्मप्रत्यक्षं । – वैशेषिक सूत्र 9/1/11

अर्थात योगियों को अपने आत्मा में परमात्मा के दर्शन होते हैं तथा मन तथा आत्मा (परमात्मा) के संयोग आत्म विषयक प्रत्यक्ष ज्ञान होता है ।

समाधिविशेषभ्यासात् । अर्थात् अभ्यास से समाधि की प्राप्ति होती है ।

तदर्थ: यमनियमाभ्यात्मसंस्कारो योगाक्वध्यात्म विध्युपाये । न्यायसूत्र 4/2/42

अर्थात मोक्ष प्राप्ति के लिए यम नियम का पालन करना आवश्यक है तथा योग के आध्यात्मिक अनुष्ठान कर आत्मा का संस्कार करना ही योग है ।

वैशैषिक दर्शन में योग:- यह दर्शन कणाद द्वारा प्रतिपादित है जिसमें योग के विषय में निम्न प्रकार कहा गया है–

आत्मन्यात्ममनसो संयोग विशेषात आत्मप्रत्यक्षम् । वैशेषिक सूत्र 9/1/11

अर्थात योगियों को अपनी आत्मा में परमात्मा के दर्शन होते हैं तथा मन तथा आत्मा (परमात्मा) के सहयोग से आत्मविषयक प्रत्यक्ष ज्ञान होता है ।

सांख्य दर्शन में योग:- "रागोपहितिर्ध्यानम्" । सांख्यसूत्र – 3/30

अर्थात ध्यान के द्वारा योग के अनुष्ठान करने चाहिए ।

जैन दर्शन में योग:- आचार्य यशोविजय ने अपने ग्रंथ द्वात्रिशिखा में वर्णन किया है–

"मोक्षेण योजनादेव योगो ह्त्र निरुध्यते" । द्वात्रिशिखा 10–1

अर्थात जिन जिन साधनों से आत्मा की शुद्धि तथा मोक्ष का योग होता है जिन जिन साधनों से आत्म तत्व की शुद्धि होती है वही साधन योग हैं । आचार्य हेमचंद्र ने योग को इस प्रकार परिभाषित किया

"मुक्खेण जोयणाओ जोगो" । -योगवंशिका गाथा

अर्थात जिन साधनों से कर्म फल का नाश होता है एवं मोक्ष का उसके साथ संयोग होता है, वही योग है । जैन दर्शन में आत्मा व परमात्मा के संयोग को योग कहा है।

बौद्ध दर्शन में योग:- बौद्ध दर्शन में निर्माण (समाधि) प्राप्ति के उपायों का वर्णन किया गया है । निर्माण समाधि का ही पर्यायवाची शब्द है । योग में समाधि, जैन में मुक्ति व बौध्द में निर्वाण तथा हिंदुओं में मोक्ष के नाम से वर्णन दर्शन में मिलता है । इन सभी के नाम अलग हैं परंतु लक्ष्य एक ही है, समाधि की प्राप्ति इस प्रकार समाधि की प्राप्ति करना ही योग है ।

योग सूत्र के अनुसार योग :- इसके प्रणेता महर्षि पतंजलि हैं । योग सूत्र में 4 पाद हैं । समाधि पाद, साधना पाद, विभूति पाद, कैवल्य पाद । महर्षि पतंजलि ने योग की परिभाषा इस प्रकार दी है–

"योगश्चित्तवृत्ति निरोध:" – योगसूत्र।

अर्थात चित्त की वृत्तियों का सर्वथा अभाव ही योग है ।

श्रीमदभगवत गीता के अनुसार योग :- गीता में योग की परिभाषा अन्य स्थान पर इस प्रकार है – **तं विद्यात् दु:ख संयोग वियोग संज्ञिताम् । - गीता 6/13**

अर्थात ऐसी विद्या जिससे दुखों से पूर्णतया मुक्ति मिल जाए उस विद्या को प्राप्त कर परमात्मा के साथ संयोग ही योग है ।

योग वशिष्ठ के अनुसार योग :- इस ग्रंथ के रचनाकार महर्षि वशिष्ठ है । महर्षि वशिष्ठ ने श्री रामचंद्र जी को योग की आध्यात्मिक विधाओं को समझाया है । योग वशिष्ठ का दूसरा नाम महारामायण है । इसके अनुसार संसार सागर को पार पाना ही योग है ।

अन्य विचारकों एवं बुद्धिजीवियों द्वारा योग:- महर्षि याज्ञवल्क्य अनुसार– जीवात्मा और परमात्मा का संयोग ही योग है ।
महर्षि व्यास के अनुसार– योग: समाधि । योग नाम समाधि का है ।
श्रीराम शर्मा आचार्य के अनुसार– शिव और शक्ति का मिलन ही योग है ।
रांगेय राघव के अनुसार– शिव और शक्ति का मिलन ही योग है।
गुरु ग्रंथ साहब के अनुसार– निष्काम कर्म करने में सच्चे धर्म का पालन है, यही वास्तविक योग है ।

उत्तर वैदिक काल में नारी :- विवाह में स्वेच्छा, शिक्षा में वेदाध्ययन का अधिकार एवं अविवाहित पुत्री का पिता की संपत्ति पर पूरा अधिकार कहा गया है । विवाह उपरांत सास– ससुर ,पति – ननद , देवर सभी का ध्यान रखती है।परिवार तथा समाज के निर्णयों में उसका सम्मान किया जाता था। ऋग्वेद में पत्नी को ही घर कहा गया है – जायेदस्तम ।मनुस्मृति में कहा गया है कि जहां नारी की पूजा होती है वहां देवताओं का निवास होता है – "यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता" वैदिक काल में स्त्री अपने आप में परिवार की आधारशिला थी । याज्ञवल्क जब ब्राह्मणों के साथ शास्त्रार्थ कर रहा था तब

याज्ञवल्क का साथ देकर गार्गी ने अपने परिवार का गौरव बढ़ाया । यज्ञवल्क की दोनों पत्नियां गार्गी एवं मैत्री गृह कार्य में दक्ष तो थी ही साथ ही साथ अतिथियों का आदर सत्कार भी अत्यंत आदर पूर्वक करती थी और आगुंतक विद्वानों से शास्त्रार्थ भी करती थी । वेदों में लोपामुद्रा , घोषा, आपाला, सरमा, विश्ववा रा रोमसा आदि मंत्रदृष्टा ऋषिकाओं के नाम प्राप्त हैं । अथर्ववेद में नारी के सम्मान को वर्णित करने वाला एक श्लोक दृष्टव्य है–

अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु सम्मनाः।जाया परये मतुमतीं वाचं यददु शान्तिवाम्।।1

वेदों में स्त्रियों की शिक्षा–दीक्षा, शील, गुण, कर्तव्य, अधिकार और सामाजिक भूमिका का जो सुन्दर वर्णन पाया जाता है, वैसा संसार के अन्य किसी धर्मग्रंथ में नहीं है। वेद उन्हें घर की सम्राज्ञी कहते हैं और देश की शासक, पृथ्वी की सम्राज्ञी तक बनने का अधिकार देते हैं। त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका।सुधा त्वं अक्षरे नित्ये तृधा मात्रात्मिका स्थिता ।।

इस श्लोक के द्वारा ब्रह्मा जी देवी स्तुति आरंभ करते हैं। विद्वानों का मानना है कि वैदिक काल के आरंभ से पहले समाज मातृसत्तात्मक था जिसमें स्त्री श्रेष्ठ और उच्च भूमिका में थी। उस युग में स्त्रियों की शिक्षा–दीक्षा की सुंदर व्यवस्था थी। अध्ययन–अध्यापन, घर–परिवार तथा सभाओं में और संघर्षमय युद्धों आदि सभी जगह स्त्रियों का समान रुप से योगदान रहता था। नारी को सभी क्षेत्रों व दिशाओं में उन्नति एवं प्रगति करने की स्वतंत्रता थी, इसीलिए उस काल में नारी की प्रतिभा तथा ज्ञान अपूर्व और अद्भुत था। उस काल में नारी के अंदर विचारशक्ति व आत्मबल के साथ उसके व्यवहार में शालीनता, विनम्रता थी तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व भी था। उस युग में स्त्रियाँ वैदिक और दर्शन आदि की शिक्षा के अतिरिक्त गणित, वैद्यक, संगीत, नृत्य और शिल्प आदि का भी अध्ययन करती थीं। क्षत्रिय स्त्रियाँ धनुर्वेद अर्थात् युद्धविद्या की भी शिक्षा ग्रहण करती थीं तथा युद्ध में भाग भी लेती थीं। ऋग्वेद के दशम मण्डल के 102वें सूक्त में राजा मुद्गल एवं मुद्गलानी की कथा वर्णित है और उसे युद्ध में विजय दिलाती है। इसी प्रकार 'शशीयसी'का तथा वृत्तासुर की माता 'दनु'का वर्णन है, जिसने युद्ध में भाग लिया और इंद्र के हाथों वीरगति को प्राप्त हुई। उच्च शिक्षा प्राप्त स्त्रियों में से कुछ आजन्म ब्रह्मचारिणी रहकर आध्यात्मिक उन्नति में लगी रहती थीं, इन्हें ब्रह्मवादिनी कहा जाता था। अन्य स्त्रियाँ गृहस्थ जीवन का संचालन करती थीं, किन्तु गृहस्थाश्रम में प्रवेश लेने से पूर्व वे ब्रह्मचारिणी रहकर अध्ययन कर चुकी होती थीं।12 ब्रह्मवादिनी स्त्रियाँ वेदाध्ययन करतीं, काव्य रचना करतीं तथा त्याग, तपस्या के द्वारा ऋषिभाव प्राप्त करके मंत्रों का साक्षात्कार भी कर लेती थीं। ऋग्वेद के अनेक सूक्त महिलाओं ने साक्षात्कृत किए हैं। उदाहरणार्थ –ऋग्वेद दशम मण्डल के 39, 40 वें सूक्त तपस्विनी ब्रह्मवादिनी घोषा के हैं और ऋग्वेद के 1.27.7 वे मंत्र की ऋषि रोमशा, 1.5.29 वें मंत्र की विश्वारा, 1.10.45 वें मंत्र की दृष्टा इन्द्राणी, 1.10.159 वें मंत्र की ऋषि अपाला थीं। अगस्त्य ऋषि की पत्नी लोपामुद्रा ने पति के साथ ही सूक्त का दर्शन किया था। सूर्या भी एक ऋषिका थीं। वेदों में नारी की स्थिति अत्यंत गौरवास्पद वर्णित हुई हैं।

आइए, वेदों में नारी के स्वरूप की झलक इन मंत्रों में देखें –

यजुर्वेद 17.45

स्त्रियों की भी सेना हो। स्त्रियों को युद्ध में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करें।

यजुर्वेद 10.26

शासकों की स्त्रियाँ अन्यों को राजनीति की शिक्षा दें। जैसे राजा, लोगों का न्याय करते हैं वैसे ही रानी भी न्याय करने वाली हों।

अथर्ववेद 14.1.6

माता–पिता अपनी कन्या को पति के घर जाते समय बुद्धिमत्ता और विद्याबल का उपहार दें। वे उसे ज्ञान का दहेज़ दें। जब कन्याएँ बाहरी उपकरणों को छोड़ कर, भीतरी विद्या बल से चैतन्य स्वभाव और पदार्थों को दिव्य दृष्टि से देखने वाली और आकाश और भूमि से सुवर्ण आदि प्राप्त करने – कराने वाली हो तब सुयोग्य पति से विवाह करे।

अथर्ववेद 14.1.20

हे पत्नी ! हमें ज्ञान का उपदेश कर। वधू अपनी विद्वत्ता और शुभ गुणों से पति के घर में सब को प्रसन्न कर दे।

ऋग्वेद 10.85.7

माता–पिता अपनी कन्या को पति के घर जाते समय बुद्धिमत्ता और विद्याबल उपहार में दें। माता–पिता को चाहिए कि वे अपनी कन्या को दहेज़ भी दें तो वह ज्ञान का दहेज़ हो।

ऋग्वेद 3.31.1

पुत्रों की ही भाँति पुत्री भी अपने पिता की संपत्ति में समान रूप से उत्तराधिकारी है।

निष्कर्ष:- भारतीय ज्ञान परंपरा में योग सभी परंपराओं ने अपनाया है । तथा इसका महत्व सर्वकालिक भी रहा है । योग, वेदांत, न्याय, वैशेषिक सांख्य, जैन, बौद्ध, योगसूत्र, श्रीमदभगवत गीता, योग वशिष्ठ, याज्ञवल्क्य, व्यास, गुरु ग्रंथ साहिब, आदि ग्रंथों बखूबी बयान किया गया है तथा योग के फल के बारे में भी बताया गया जिसके अनुसार चित्त की वृत्तियों का निरोध करना मुख्य रूप से योग सूत्र में बताया गया है । अष्टांग सिद्धांत, निष्काम कर्म, कर्मसु कौशलम् योग: समाधि । समत्व भाव, आत्म शुद्धि मुक्ति, निर्वाण, मोक्ष" – जैन, बौद्ध, हिंदुओं में माना गया है। निष्काम कर्म करने से सच्चे धर्म का पालन है । तथा योग करने का पहला फल यह होता है कि योगी का शरीर हल्का हो जाता है व वह निरोगी हो जाता है । तथा उसमें विषयों की तलाश मिट जाती है ।

वेदों में शिक्षा, अध्ययन – अध्यापन, जीवनसाथी चुनने की स्वतंत्रता, विवाह संबंधी निर्णय की स्वतंत्रता, अस्त्र – शस्त्र चलाने की छूट, धार्मिक कार्यक्रमों में, पूजा पाठ में स्त्रियों का महत्व, दर्शनशास्त्र का भी ज्ञान उन्हें दिया जाता था। उत्तर वैदिक काल में पूरे देश में स्त्री के लिए धार्मिक परंपरा और पुराण पंथी नियमों का निर्माण हुआ, स्त्रियों पर कठोर दबाव डाला गया ,यह प्रवृत्ति पूरे समाज में फैल गई ,धर्मशास्त्र, मनुस्मृति जैसे ग्रंथों का निर्माण हुआ।

सहायक ग्रंथ:-

1 पतंजलि योगसूत्र

2 घेरंड संहिता

3 श्रीमद्भगवद्गीता

4 हठयोग प्रदीपिका

5 वशिष्ठ संहिता

6 श्रीमद् भगवत गीता, स्वामी रामसुखदास, गीता प्रेस गोरखपुर, जनवरी 2019

7 Yoga Education- NIOS , Delhi

8 www.Yoga & Peace

9 www.yoga education

10 राजस्थान पत्रिका , जयपुर 20 जून 2021

11 दयानंद सरस्वती

12 श्रीराम शर्मा आचार्य

13 अथर्ववेद, संपादक – डॉ जियालाल कंबोज, स्मृतियों में नारी डॉ (श्रीमती)भारती आर्य

14 वैदिक साहित्य संस्कृति द्वितीय भाग डॉ किरण कुमा

15 वी. डी. शुक्ल: पूर्व मध्यकालीन संस्कृति और जीवन।

16 बी डी अग्रवाल: भारतीय संस्कृति।

17 डॉ. एस कपूर: भारत में पुनर्जागरण।

18 कालीशंकर भटनागर: भारतीय संस्कृति का इतिहास।

19 ऋगवेद ।